हिन्दी की बोलियाँ

ब्रज

ब्रजभाषा ब्रज क्षेत्र के आधार पर दिया गया नाम है। ब्रज का अर्थ होता है 'चलना' अथवा 'गोष्ठ'। प्राचीन काल में ब्रज क्षेत्र के लोग 'गोचारण' करते थे गोचारण एवं गोपालन हेतु राजस्थान के घने जंगलों में यायावर वृत्ति को धारण करते थे। इसी कारण इनकी संस्कृति ज्ञान प्रधान थी। इन गोपालकों की भाषा अथवा गोष्ठ भाषा कहा गया। कालांतर में इसका रूढ़ार्थ मथुरा एवं उसके सहवर्ती नगरों की भाषा के लिए किया गया। लोकोक्तियों के आधार पर ब्रजभाषा को 84 कोस तक विस्तृत माना गया है और उसकी सीमाएँ इस प्रकार निर्धारित की गयी है।

" इत बरहद उत सोलहद
पुनि सुरसेन का गाँव
ब्रज चौरासी कोस के
मथुरा के मण्डल धाम॥ "

भाषा की दृष्टि से यह श्रेणी भी संकुचित है। वस्तुतः ब्रजभाषा पश्चिमी हिंदी की प्रतिनिधि भाषा है। इस भाषा का क्षेत्र अत्याधिक व्यापक रहा है। मथुरा इस भाषा का केंद्र है।

नामकरण एवं क्षेत्र :--

नामकरण की दृष्टि से इसको अंतर्वेदी, ग्वालियरी पिंगल और मध्यदेशीय कहा गया है। किन्तु इन नामों में भी अव्याप्ति एवं अतिव्याप्ति का दोष है।

ब्रजभाषा मुख्यतः मथुरा, आगरा, और अलीगढ़ की भाषा है। इसके अतिरिक्त बरेली, बदायूँ, एटा, मैनपुरी, भरतपुर, बसौडी, उत्तर पूर्व ग्वालियर, दक्षिणी बुलन्द शहर, धौलपुर और नैनीताल तक प्रभावी भाषा है। सन 1971 की जनगणना के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या 2॥ करोड के लगभग है। साहित्यिक दृष्टि से ब्रजभाषा हिंदी की समस्त बोलियों में सबसे अधिक समृद्ध है। खड़ीबोली की प्रतिष्ठा के पूर्व ब्रजभाषा ही उत्तरी भारत के साहित्य एवं संगीत की भाषा थी। गुजरात से लेकर बंगाल तक ब्रजभाषा में साहित्य की रचना हुई। मध्यकाल का संपूर्ण कृष्णभक्ति काव्य और परवर्ती रीतिकाव्य तथा 19 वी सदी तक लिखित काव्य तक में ब्रजभाषा का प्रभाव रहा है। सूर के युग में ब्रजमण्डल कृष्णभक्ति काव्य का केंद्र बना, तो इसकी ख्याति में और अधिक वृद्धि हुई। सुरदास एवं अष्टछाप के कवि, मीरा, रहीम, रसखान, बिहारी, देव, पद्माकर, मतिराम, भारतेन्दु और रत्नाकर आदि ब्रजभाषा के आचार्यो ने काव्य का सृजन किया।

ब्रजभाषा के नाम के साथ जुड़ा हुआ भाषा शब्द इसके अतीत के गौरव का परिचालक है। माधुर्य एवं समासोक्ति की दृष्टि से यह भाषा हिंदी में सर्वोकृष्ट है तथा मध्यदेश में विकासित होने के कारण इसमें संस्कृत एवं प्राकृत की श्रेष्ठ उपलब्धियाँ प्रकट हुई हैं। इसी कारण लोक में प्रचलित है—

" ब्रजभाषा सी मिठलौनी कहा।"

भाषा वैज्ञानिक विशेषताएँ :--

1] 'ऐ' और 'औ' ब्रजभाषा की विशेष ध्वनियाँ है जो सामान्य 'ऐ' और 'औ' ब्रजभाषा की अपेक्षा कम विवृत है।

2] खड़ीबोली में जहाँ ए,ओ, पाया जाता है, वहाँ ब्रजभाषा में 'ऐ' और 'औ' पाया जाता है। जैसे- तो, को, पे,ने के स्थान पर तौ, कौ, पै, मै, नै पाया जाता है।

3] खडीबोली के शब्द के अंत में जहाँ 'आ' मिलता है, ब्रजभाषा में उसके स्थान पर 'ओ' मिलता है जैसे – आया > आयो, होता > होतो, दूजा > दुजो

4] प्राचीन अवधी की तरह ब्रजभाषा में पुल्लिंग एकवचन के अंत में 'उ' 'और स्त्रीलिंग एकवचन में 'इ' का प्रयोग होता है। जैसे— आमलु, सबु, कालि, दुरि इत्यादि।

5] विशेषण का प्रयोग खड़ीबोली के समान होता है।

6] ब्रज में निम्नालीखत परसर्ग प्रयुक्त होते है–

- कर्ता में – ने, नै
- कर्म में – को, कौ
- करण में – सो, सौ, तो, तै
- संबंध में – का, की, के। को
- अधिकरण – में, मैं, मांझ, पे, पै, पर

7] सर्वनाम निम्नलिखित रूप में प्रयुक्त होते है–

- उत्तम पुरुष – मै, मो, हौ
- मध्यम पुरुष – तू, तूँ, तै, तौ
- अन्य पुरुष – वा, वौ, वह

8] प्रश्नवाचक को, कौन, का, काहि, कहा

9] अनिश्चयवाचक -- कोई, कोऊ, काहू, कहू।

10] उच्चारणगत विशेषताएँ –

- शब्द के अंत में ह्रस्व 'इ', 'उ', का प्रयोग
- पदान्त 'ए' का 'ऐ' और 'ओ' का 'औ' हो जाता है। यथा -- उधो > उधो, पायो > पायौ,
- अल्पप्राण -- मुझ > मुजो, भूखा > भूका, हाथ > हात
- व्यंजन संयोग – एकादशी > एकाशी,

11] संख्यावाची विशेषण – करोड का करोर, दूसरा का दुजौ

============

अवधी

अवधी के पश्चिम में प्रचलित बोलियों तथा भाषाओं का संबंध शौरसेनी प्राकृत अपभ्रंश से है। इसी प्रकार इसके पूर्व में मागधी बोलियों का क्षेत्र है। इसी को आधार मानकर गृयर्सन ने पूर्वी हिंदी की बोलियों का संबंध अर्धमागधी से निर्धारित किया।

क्षेत्र – जैसा की अवधी के नाम से ही प्रकट होता है कि यह केवल अवध की बोली है, पर वास्तव में यह केवल अवध तक ही सीमित नहीं है। एक ओर यदि इसका प्रयोग बरदोई, खीरी, फैजाबाद के कुछ भाग में होता है तो दूसरी ओर वह अवध के बाहर फतेहपुर, इलाहाबाद, केराकज तहसील छोडकर जैनपुर, तथा मिर्जापुर, के पश्चमी भाग में बोली जाती है। (इस बोली का केंद्र अयोध्या है। अयोध्या शब्द का ही विकसित रुप 'अवध' है)

अवधी की विशेषताएँ :--

1) डॉ. बाबूराम सक्सेना के अनुसार अवधी की निम्न तीन बोलियाँ है —
   1] पश्चमी 2] पूर्वी 3] केंद्रीय
2) संज्ञा – संज्ञा में प्राय: तीन रूप होते है—
   घोडा - घोड़वा - घोडौना
3) साहित्य – हिन्दी के विकास के चार काल है–
   1]आदिकाल 2]भक्तिकाल 3] रीतिकाल 4] आधुनिक काल
4) भक्तिकाल – भक्तिकाल में काव्याधरा के चार रूप दृष्टिगोचर होते है –
   1] संतकाव्य 2] प्रेमकाव्य 3] रामकाव्य 4] कृष्णकाव्य
   इनमे से प्रथम तीन धाराओं में ही अवधी साहित्य के दर्शन होते है। अत: इन्हीं तीन का वर्णन किया जाएगा।

- संतकाव्य :-- संतकाव्य परंपरा के उन कवियों में जिन्होंने अवधी को अपने काव्य का माध्यम बनाया। मूलकदास, मथुरादास, धरनीदास, संत चरणदास, दयाबाई, सहजोबाई, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।
- प्रेम काव्य– प्रेम काव्य के अधिकांश कवियों का निवास स्थान अवध प्रदेश होने के कारण उनके काव्य में अवधी भाषा का प्रयोग होना स्वाभाविक है। प्रेमकाव्य के अवधी भाषा के कवियों में मलिक महम्मद जायसी सर्वश्रेष्ठ कवि है। उनका 'पद्मावत' अवधी भाषा का उत्कृष्ट ग्रंथ है।
- रामकाव्य – रामभक्ति शाखा के मूर्धन्य कवि है-- 'गोस्वामी तुलसीदास' उनका 'रामचरितमानस' अवधी भाषा का अत्यंत उत्कृष्ट ग्रंथ है। गोस्वामीजी की रचनाओं को भाषा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–
  1] अवधी की रचनाएं
  2] ब्रजभाषा की रचनाएं
  तुलसीदास जी ने अधिकांश रचनाएँ अपनी चहेती भाषा अवधी में ही की है।

5) ध्वनि –
- स्वर अवधि में शब्दार्थ का प्रयोग नहीं होता है।
- 'ए' का 'य' हो जाता है। जैसे – एक > यक

6) व्यंजन –
- 'क्ष' के लिए 'ख' का प्रयोग
- 'ण' के स्थान पर 'न' का प्रयोग
- 'य' का 'ज' होता है– यमराज > जमराज
- 'व' का 'उ' हो जाता है। देव > देउ
- व्यंजन संयोग अधिक मिलता है-- जब से > जबसे, भागचला > भाच्चला, करता > कर्ता
- संज्ञा के तीन रूप प्राप्त होते है–
  पुल्लिंग – घोरा - घोरवा- घोरौना
  स्त्रीलिंग – बेटी - बिटिया - बिटइया
- 'ऋ' के स्थान पर 'रि' आता है – ऋषि > रिसि
- अकारण अनुनासिकता - श्वास > साँस । सर्प > साँप
- घोषीकरण - भक्त > भगत, कंकण > कंगन
- स, श, ष के स्थान पर 'स' मिलता है। जैसे – श्वास > साँस

========

भोजपुरी

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में बिहारी की तीन बोलियाँ मानी गयी हैं- भोजपुरी, मगही और मैथिली। डॉ. ग्रियर्सन इन्हें बहिरंग भाषा कहा है। इनमें मगही प्राचीन मगध की भाषा है तथा मैथिली का नामकरण मिथिला के नाम पर हुआ है। भोजपुरी भाषा भोजपुरी की भाषा थी। उनमें प्राचीन साहित्य की दृष्टि से मैथली का महत्व रहा है।

आधुनिक हिंदी में भोजपुरी भाषा का हिंदी बोलियों में विशेष महत्व है। आधुनिक भोजपुर शाहबाद जिले का एक परगना है तथा भोजपुर के नाम 'बड़का भोजपुर' और 'छोटका भोजपुर' नाम के दो गाँव रह गये हैं। लेकिन प्राचीन काल में भोजपुर मल्ल जनपद की राजधानी थी तथा राजा भोज के वंशजो ने मल्ल जनपद की राजधानी थी। तथा राजा भोज के वंशजो ने इसे बसाया था। राजा भोज के नाम पर ही इस नगर का नाम भोजपुर रखा गया। इस क्षेत्र की भाषा का नाम भी भोजपुरी पड़ा। भाषा के रूप में भोजपुरी का प्रयोग सर्वप्रथम 1789 ई. मे किया गया था।

नामकरण :-- भोजपुरी के अतिरिक्त इस भाष को पूरबी भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त भोजपुरिया भी इसका एक नाम है।किंतु भोजपुरी नाम ही विशेष प्रसिद्ध है। भोजपुरी की प्रमुख चार बोलियाँ हैं -- उत्तरी भोजपुरी, दक्षिणी भोजपुरी, पश्चिमी भोजपुरी तथा नगपुरिया। दक्षिणी भोजपुरी ही मूल भोजपुर की बोली है।
क्षेत्र :-- भोजपुर के अंतर्गत उत्तर प्रदेश के वाराणसी मंडल के बनारस , गाजीपुर, बलिया, मिर्जापुर और जौनपुर गोरखपुर मण्डल के गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़ और बस्ती का कुछ भाग बिहार के शाहाबाद, सारन, चम्पारन आरा, छपरा के अतिरिक्त राँची और पलामू के अधिकांश भाग आते है। इस प्रकार भोजपुरी ,उत्तर में नेपाल की सीमा से, दक्षिण में छोटा नागपुर, पश्चिम में पूर्वी मिर्जापुर से पूर्व में राँची है और पटना के पास तक बोली जाती है तथा भारत में इसके बोलनेवालों की संख्या 3 करोड़ के लगभग है।
विदेशी स्वरूप :-- भोजपुरी का प्रसार न केवल हिंदी प्रदेश अपितु भारत के बाहर भी हैं। भोजपुरी हिंदी की एक मात्र भाषा है, जिसका विस्तार विदेशों में भी है और अनेक राष्ट्रों की मुख्य भाषा के रूप में भोजपुरी प्रतिष्ठित है। मारीशस, फ़िजी, सूरीनाम आदि देश उल्लेखनीय है।
भोजपुरी की उत्पत्ति :-- भोजपुरी का विकास मागधी प्राकृत से हुआ है। चूंकि पूर्वी प्रदेशों की अधिकांश बोलियाँ मागधी से विकसित हुई है अतः कतिपय भाषा वैज्ञानिकों ने भोजपूरी की प्रकृति हिंदी के अनुरूप है तथा बहुत कुछ पूर्वी हिंदी की प्रमुख बोली अवधी से मिलती है ऐसा मत व्यक्त किया है।
साहित्य :-- भोजपुरी में प्राचीन साहित्य नहीं मिलता है। संत साहित्य पर भोजपुरी का प्रभाव पाया जाता है। आधुनिक काल में भी भोजपुरी साहित्य का विकास मिलता है। राहूल सांकृत्यायन, कृष्णदेव उपाध्याय, चतुरी चाचा, रघुबीर भिखारी ठाकुर आदि की रचनाएँ भोजपुरी में मिलती है। भोजपुरी आज गद्य और पद्य दोनों में विकसित हो रही है। पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हो रही है। चलचित्रों का निर्माण भी हो रहा है।
भाषा वैज्ञानिक विशेषताएँ :--
1] भोजपुरी ध्वनियाँ सामन्यतः हिंदी की अन्य बोलियों की भांति है। परंतु इसमें लयात्मकता और सुरुघात पाया जाता है। इसलिए भोजपुरी में माधुर्य अधिक है।
2] शब्दों के अंतर्गत 'र' का लोप हो जाता है, जैसे – लरिका > लइका, कीर > कइ
3] 'म्ब' का 'म' हो जाता है, जैसे – जम्बु > जमुना, कदम्ब > कदम
4] 'न्द' का न्न हो जाता है, सुन्दर >सुन्नर, सिन्दूर > सिन्नूर
5] व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति मिलती है-- चाकू > चक्कू
6] 'ऐ' का 'आ' और 'औ' का 'अउ' मिलता है। जैसे – पैसा > पइसा, मैल > मइल, कौन > कउन
7] स्वरों की अन्नासिकता उल्लेखनीय है।
8] स्वरों की अनुनासिकता ल्लेखनीय है।
9] वर्ण विपर्यय – मारवाड़ी > माड़वारी, वाराणसी > बनारस
10] सज्ञार्थक क्रियाओं में 'ल' का प्रयोग होता है। खाया > खाला

============

खड़ीबोली

खड़ीबोली पश्चिमी हिंदी के अंतर्गत प्रमुख बोली है। इसे कौरवी भी कहा जाता है। यह नाम राहुल सांकृत्यायन द्वारा दिया है। यह नाम कैसे पड़ा, विवाद का विषय है। मुख्य मत इस प्रकार है– खड़ी मूलतः 'खरी' है और इसका अर्थ है 'शुद्ध'। लोगों ने इस बोली का साहित्य मे प्रयोग करते समय जब अरबी-फारसी शब्दों को निकाल कर इसे शुद्ध रूप में प्रयुक्त करने का यत्न किया तो इसे 'खरीबोली' कहा गया। जो बाद में 'खड़ीबोली' हो गया। अन्य मत है जो 'खड़ी' हो अर्थात 'पड़ी' का 'उलटा' । पुरानी ब्रज, अवधी, पड़ी बोलियाँ थी। अर्थात वे आधुनिक काल की भाषा नहीं बन सकी। ' कामता प्रसाद गुरु' के अनुसार 'खडी' का अर्थ है 'कर्कश'। यह बोली ब्रज के तुलना मे कर्कश है। अतः यह नाम पड़ा।गिलक्राइस्ट ने 'खड़ी का अर्थ 'मानक', 'standard' या परिनिष्ठित किया है। बेली ने 'खड़ी का अर्थ प्रचलित या चलती माना, अर्थात जो ब्रज आदि को पीछे छोड़ प्रचलित हो गई। एक अन्य मतानुसार इसमें खड़ी पाई अधिक होने से इसे खड़ी बोली कहा गया।

इसका क्षेत्र देहरादून का मैदानी भाग, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, दिल्ली, नगर, गाजियाबाद, बिजनौर, रामपुर और मुरादाबाद है।

विशेषताएँ :-- खड़ी बोली की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं --

1] व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति पायी जाती है -- मोटा > मोट्टा

2] खड़ी बोली आकारान्त प्रधान है। इसमें अधिकांशः आकारान्त शब्दों का प्रयोग मिलता है, जैसे– भागता, पाना, खाया, पड़ा आदि।

3] खड़ी बोली में मूर्धन्य 'ल' का प्रयोग मिलता है, जिसका मानक हिन्दी में अभाव है, जैसे – जंगल, बाल आदि ।

4] खड़ी बोली में मानक हिन्दी के न, भ, के स्थान पर क्रमशः 'ण', 'ब' का प्रयोग होता है, जैसे– खाना > खाणा, जाना > जाणा, कभी > कबी, सभी > सबी

5] खड़ी बोली की क्रिया रचना में मानक हिन्दी से बड़ा साम्य है।

6] कतिपय परिवर्तनों के साथ मानक हिन्दी क्रिया-रूपों का प्रयोग खड़ी बोली में मिलता है, जैसे – चलता है > चले हैं ।

7] निश्चयार्थक भूतकाल में खड़ी बोली में 'या' लगाया जाता है, जैसे - बैठा > बैठ्या, उठा > उठ्या

खड़ीबोली का प्रथम कवि :--

खड़ी बोली के प्रथम कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' माने जाते हैं। अयोध्या सिंह हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे ।

खड़बोली का प्रथम महाकाव्य :--

'प्रिय प्रवास' हरिऔध जी का सबसे प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण ग्रंथ है। यह हिंदी खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य है और इसे मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

खड़ीबोली का विकास :--

खड़ी बोली गद्य की सर्वप्रथम उल्लेखनीय रचना दरबारी कवि गंग की "चंद-छंद बरनन की महिमा" है। परंतु इसमें ब्रज मिश्रित खड़ीबोली का प्रयोग किया गया था। इसके बाद और भी रचनाएँ लिखी गयी लेकिन उसकी भाषा बहुत अव्यवस्थित थी। सही मायने में खड़ी बोली गद्य के विकास की परम्परा में मुंशी सदा सुखलाल,इंशा अल्ला खां, लल्लूलाल और सदल मिश्र का नाम आता है। सन 1800 में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना हुई। फोर्ट विलियम कालेज हिन्दू-उर्दू-अध्यापक हिन्दी-उर्दू गद्य पुस्तकों तैयार करने की व्यवस्था की। लल्लूलाल और सदल मिश्र फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में काम करते थे। अंग्रेजों के आदेश से उन्होने स्वतंत्र रूप में कुछ ग्रन्थों का निर्माण किया। फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के बाहर इंशा अल्ला ख़ाँ ने रानी केतकी की कहानी और सदासुख लाल 'नियाज' ने सुखसागर लिखकर खड़ीबोली हिन्दी की स्वतंत्र रूप में सेवा की।

भारतेन्दु पूर्व युग में मुख्य संघर्ष हिंदी- उर्दू को लेकर था। इस युग के दो प्रसिद्ध लेखकों- राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' व राजा लक्ष्मण सिंह हिंदी के संरक्षक के रूप में डटकर खड़े रहे। राजा शिव प्रसाद ने हिंदी का गँवारुपन दूर करने का प्रयास किया। तो राजा लक्ष्मण सिंह ने विशुद्ध संस्कृतनिष्ठ हिंदी का समर्थन किया। इन दोनों की हिन्दी के प्रति निष्ठा के कारण हिंदी गद्य की प्रतिष्ठा स्थापित हुई। परिणाम स्वरूप गद्य साहित्य की विविध विधाओं का विकास भारतेन्दु युग में हुआ। हिंदी सही मायने में भारतेन्दु के काल में 'नई चाल में ढली और उनके समय में ही हिंदी के गद्य के बहुमुखी रूप का सूत्रपात हुआ। उन्होंने न केवल स्वयं रचना की बल्कि अपना एक लेखक मंडल भी तैयार किया, जिसे 'भारतेन्दु मंडल' कहा गया। भारतेन्दु युग की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि गद्य रचना के लिए खड़ी बोली को माध्यम के रूप में अपनाकर युगानुरूप स्वस्थ दृष्टिकोण का परिचय दिया। लेकिन पद्य रचना के मसले

में ब्रजभाषा या खड़ी बोली को अपनाने के सवाल पर विवाद बना रहा जिसका अन्त द्विवेदी के युग में जाकर हुआ।

खड़ी बोली और हिंदी साहित्य के सौभाग्य से 1903 ई. में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादन का भार सम्भाला। वे सरल और शुद्ध भाषा के प्रयोग के हिमायती थे। वे लेखकों की वर्तनी अथवा त्रुटियों का संशोधन स्वयं करते चलते थे। उन्होंने हिंदी के परिष्कार का बीड़ा उठाया और उसे बख़ूबी अंजाम दिया। गद्य तो भारतेन्दु युग से ही सफलतापूर्वक खड़ी बोली में लिखा जा रहा था, अब पद्य की व्यावहारिक भाषा भी एकमात्र खड़ी बोली प्रतिष्ठित होनी लगी। इस प्रकार ब्रजभाषा, जिसके साथ
में 'भाषा' शब्द जुड़ा हुआ है, अपने क्षेत्र में सीमित हो गई अर्थात् 'बोली' बन गई। इसके मुक़ाबले में खड़ी बोली, जिसके साथ 'बोली' शब्द लगा है, 'भाषा बन गई', और इसका सही नाम 'हिंदी' हो गया। अब खड़ी बोली दिल्ली के आसपास की मेरठ जनपदीय बोली नहीं रह गई, अपितु यह समस्त उत्तरी भारत के साहित्य का माध्यम बन गई। द्विवेदी युग में साहित्य रचना की विविध विधाएँ विकसित हुई।। महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्याम सुन्दर दास, पद्म सिंह शर्मा, माधव प्रसाद मिश्र, पूर्णसिंह, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी आदि के अवदान विशेषतः उल्लेखनीय हैं।
खड़ी बोली के विकास में छायावाद युग का योगदान अनन्यसाधारण है। प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा आदि ने भरपूर योगदान दिया। इनकी रचनाओं को देखने के बाद हम कह सकतते है कि खड़ी बोली सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने में निश्चित रूप में समर्थ है। हिंदी में अनेक भाषाई गुणों का समावेश हुआ। अभिव्यजंना की विविधता, बिंबों की लाक्षणिकता, रसात्मक लालित्य, छायावाद युग की भाषा की अन्यतम विशेषताएँ हैं। हिंदी काव्य में छायावाद युग के बाद प्रगतिवाद युग, प्रयोगवाद युग आदि आए। इस दौर में खड़ी बोली का काव्य भाषा के रूप में उत्तरोत्तर विकास होता गया।